प्रातिभ गद्यकार : शमशेर

डॉ. अंगदकुमार सिंह

सारांश:

मार्क्सवादी विचारक शमशेरबहादुर सिंह सौन्दर्यबोध, अमूर्त चित्रात्मकता, सौन्दर्यबोध, कुण्ठित प्रेम, कवियों के कवि, प्रातिभ गद्यकार, समर्थ ग़ज़ल–गो, शिखर सम्पादक थे। वे अपनी कुण्ठा को कविता के माध्यम से शब्दों में पिरोकर बाहर निकालने का काम किया तो 'चुका भी नहीं हूँ मैं', 'इतने पास अपने', 'काल तुझसे होड़ मेरी', 'उदिता', 'मैं भारत गुण गौरव गाता', 'बात बोलेगी हम नहीं' काव्य–संग्रह का सृजन भी। उनका गद्य–साहित्य उनके काव्य–संग्रह से किसी भी मायने में उन्नीस नहीं है। 'सामाजिक सत्य और रचना का माध्यम', एक बिल्कुल पर्सनल एसे', 'हमारे सांस्कृतिक समन्वय का एक प्रतीक : रहीम', 'लई आरागाँ : नये योरोपियन साहित्य का एक व्यक्तित्व', 'ग़ालिब मेरी दृष्टि में', 'कविता की बाते : निराला की कविताएँ', 'सुभद्राकुमारी चौहान : एक अध्ययन', 'किस तरह आखिर मैं हिन्दी में आया' आदि में शमशेर के प्रातिभ गद्य के नमूने देखे जा सकते हैं। शमशेर की लेखन–शैली में अज़ूबा हुनर है।

बीजशब्द :

सौन्दर्यबोध, कुण्ठित प्रेम, कवियों के कवि, कवि–प्रतिमा, प्रातिभ गद्यकार, गद्य–प्रतिमा।

भूमिका :

मार्क्सवादी विचारधारा रूपी यज्ञकुण्ड को जलाये रखने तथा उसे स्थापित करने में अपनी प्रतिभा की आहुति देने वाले या अपने चिन्तन, मनन एवं सूझ–बूझ से बड़े–बड़े साहित्यिक धुरन्धरों को पछाड़कर आगे निकल जाने वाले, अज्ञेय द्वारा सम्पादित दूसरा सप्तक में अपना स्थान सुरक्षित करने वाले, सौन्दर्यबोध, अमूर्त चित्रात्मकता, शब्द–संगीत को काव्य–शिल्प में प्रमुखता से स्थान देने वाले, कुण्ठित प्रेम को कविताओं के माध्यम से व्यक्त करने वाले, कवियों के कवि, प्रातिभ गद्यकार, समर्थ ग़ज़लकार–कलाकार, शिखर सम्पादक शमशेरबहादुर सिंह का जन्म जाट परिवार में 13 जनवरी, 1911 ई. को उत्तर प्रदेश (अब उत्तराखण्ड) के देहरादून शहर में श्रीमती प्रभुदेई एवं श्री तारीफ सिंह के घर हुआ था। शमशेर माँ की आँचल की छाँव में किलकारी करते हुए जीवन के पथ पर अग्रसर हो ही रहे थे कि 9 वर्ष की अवस्था में विधाता ने मातृ–स्नेह से आपको वंचित कर दिया। जिसका आपके बालमन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा और आप कुण्ठित हो गये। इसी कुण्ठा ने आपके शरीर को अपने आगोश में ले लिया तथा कविताओं, रचनाओं के माध्यम से अवसर पाकर काग़ज पर अंकित होने के लिए, आपको झकझोरकर, बेचैनकर कलम के सहारे पेंग मारती हुई एवं कुलाँचे भरती हुई दूसरा सप्तक में संकलित होने का अवसर उपलब्ध करायी। शमशेर का दूसरे सप्तक में कविताएँ संकलित हुई ही इसके अलावा और भी कई संग्रह यथा–'चुका भी नहीं हूँ मैं', 'इतने पास अपने', 'काल तुझसे होड़ मेरी', 'उदिता', 'मैं भारत गुण गौरव गाता', 'बात बोलेगी हम नहीं' आदि हैं तथा आपने सम्पादन जैसा गुरुतर दायित्त्व का निर्वहन करते हुए 'कहानी' और 'नया साहित्य' का सम्पादन किया।

साहित्य–समीक्षा :

यहाँ पर मैंने शमशेर की कविताओं तथा उनके द्वारा सम्पादित 'कहानी' और 'नया साहित्य' पर विचार न करके 'रंजना अरगड़े' द्वारा सम्पादित शमशेरबहादुर सिंह की 'कुछ और गद्य रचनाएँ' पर अपनी समीक्षा–दृष्टि डालने की चेष्टा की है। यह कृति राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा. लि., 2/38, अंसारी रोड, दरियागंज, नयी दिल्ली से पहली बार 1992 ई. में प्रकाशित हुई, इसमें कुल 239 पृष्ठों में शमशेर के अनेक लेख और निबन्ध संकलित हैं। जैसे–'सामाजिक सत्य और रचना का माध्यम', एक बिल्कुल पर्सनल एसे', 'हमारे सांस्कृतिक समन्वय का एक प्रतीक : रहीम', 'लई आरागाँ : नये योरोपियन साहित्य का एक व्यक्तित्व', 'ग़ालिब मेरी दृष्टि में', 'कविता की बाते : निराला की कविताएँ', 'सुभद्राकुमारी चौहान : एक अध्ययन', 'किस तरह आखिर मैं हिन्दी में आया', 'सादगी' व 'पुरकारी' आदि। यह सभी निबन्ध या गद्य पृष्ठ संख्या 11 से 230 तक संकलित हैं तथा अन्तिम 9 पृष्ठों में परिशिष्ट के अन्तर्गत 'कविकर्म : प्रतिभा और अभिव्यक्ति–1', 'कविकर्म : प्रतिभा और अभिव्यक्ति–2' आशुकविता है। इसमें सिर्फ़ कुछ निबन्धों को छोड़ दिया जाय तो बाकी बचे सभी निबन्ध शमशेर के व्यक्तित्व के अनेक पहलू को उजागर करते हैं। इनके निबन्ध ललित विषय से सम्बन्धित नहीं है फिर भी उसको इन्होंने इस ढंग से प्रस्तुत किया है कि उसका प्रभाव हमारे मन–मस्तिष्क पर इस प्रकार छा जाता है कि वह हमें ललित प्रतीक होने लगता है।

शमशेर बहादुर सिंह ने 'सामाजिक सत्य और रचना का माध्यम' नामक लेख में कवियों को कर्त्तव्य के प्रति सचेत करते हुए कुछ ज़रूरी सुझाव दिया है जो पहले भी प्रासंगिक था, आज भी है और भविष्य में भी रहेगा। पहले की कही गयी बात–''लीक छोड़कर तीनों चले, शायर, शूर, सपूत'' का निर्वहन करते हुए वे जो लिखते हैं उसकी एक बानगी उनके निबन्ध के खण्डांश में देखी जा सकती है–''बड़े–बड़े कवियों की विशेषता यह होती है कि वे परम्परागत माध्यम को अपनाकर भी उसमें कुछ अपना नया भी डाल देते हैं, उसे बदलते हैं, एक नयी पहल करते हैं, जबकि छोटे या साधारण कवि उनका अनुकरण करते हैं, उसके बनाये हुए रास्ते पर चलते हैं।''[1] 'निराला और राम की शक्ति पूजा' पर सटीक और बेबाक टिप्पणी करते हुए शमशेर जी ने जो कहा है वह अपने आप में बेजोड़ है। उनकी स्थापना को देखकर कोई भी सरस–हृदय विद्वान मुरीद हो जाता है और लोहा मानने के लिए बाध्य भी। उनके गद्य का यह जुमला देखा जा सकता है कि, ''निराला भी आदर्शवादी हैं, लेकिन वे उन्मुक्त भी हैं, इसीलिए यथार्थ के ज़्यादा करीब हैं। निराला की प्रेमानुभूति भरपूर मांसल और गहरी थी। वह एक आदर्श 'नायक' कहे जा सकते थे और कहे भी जाते थे। देहाती और सामन्ती वातावरण में पले निराला बहुत सी चींजों को छोड़ नहीं सकते थे और इसीलिए वे अपनी गरीबी को भी एक उदात्त रूप दे देते हैं। 'राम की शक्ति पूजा' में वास्तविक हीरो निराला स्वयं हैं। उनके व्यक्तित्त्व की मांसलता, उनका भरापूरापन, उनका अकुण्ठित व्यक्तित्व यह सब उनकी कविता में प्रकट होता है।''[2]

शमशेर को सबसे प्रिय कवि बैद्यनाथ मिश्र 'नागार्जुन' लगते हैं क्योंकि इनमें खरा और सच्चा सीधा व्यक्तित्व, भाषा, रस मर्मज्ञता के साथ गाँव–गवई की चिलम–सा रफ और अपनाव, अनुभवीजनों के चुटकुलों

का गहरा संकेत मिलता है। वे उनका मूल्यांकन नीर–क्षीर विवेकी राजहंस की तरह तटस्थता के साथ करते हुए 'एक बिल्कुल पर्सनल एसे' में तटस्थता के साथ कहते हैं कि, "यह मुँहफट कवि अक्सर मुझे सबसे बड़ा सुलझा हुआ, सबसे आधुनिक, सबसे जागरूक कवि लगता है। X X X हिन्दी का सबसे बड़ा व्यंग्यकार कवि जिसको इतिहास भूलायेगा नहीं, यही कवि है। तालाब की मछलियाँ, प्रेत का बयान, पर्चा बाँटने वाला, दुखहरन मास्टर इसके उदाहरण हैं। X X X शहीदों की पावन याद को हमारी आँखो में बसाने वाला और कौन दूसरा कवि हिन्दी में लिख रहा है, कोई मुझे बताये। आज के अत्यन्त सस्ते खोखले दम्भ के युग में नागार्जुन की कविताएँ क़ीमती दस्तावेज़ हैं। इसलिए यह मुझे आज के कवियों में सबसे अधिक प्रिय हैं। उत्कृष्ट से उत्कृष्ट शिल्प मैंने उनके यहाँ देखा है।"[3] केदारनाथ अग्रवाल पहाड़ों का सीना चीरने वाले उस कुटज के समान हैं जो अतल से ख़ुराक लेकर जिजीविषा रखते हैं। क्योंकि ये उस बुन्देलखण्ड से मिलान करते हैं जहाँ की रानी लक्ष्मीबाई थीं। वहाँ का बच्चा–बच्चा "बुन्देले हरबोलो के मुँह हमने सुनी कहानी थी, ख़ूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी" इस भावना से लबरेज़ था। ऐसे वातावरण का प्रभाव केदारनाथ पर भी स्पष्टतया देखा जा सकता है। इसके बारे में शमशेर जब लिखते हैं तो वे उनके पूरे वातावरण को ध्यान में रखकर, क्योंकि किसी का मूल्यांकन करने से पहले हमें उसके सम्पूर्ण पृष्ठभूमि को ध्यान में रखना चाहिए। यदि ऐसा हम नहीं करते हैं तो उसका समग्र मूल्यांकन नहीं किया जा सकता। शमशेर ने केदारनाथ अग्रवाल के निमित्त जो लिखा है उसका एक दृष्टान्त देखा जा सकता है– "केदार जिस खोज की तरफ बढ़ा है वह है, समाज का सत्य और प्रकृति का खुला नैसर्गिक सौन्दर्य। अन्याय के ख़िलाफ़ और मेहनत के पक्ष में बेझिझक वह बोलता है। उसके व्यंग्य में दोहरी–तिहरी धार नहीं, सीधी एक धार।"[4]

त्रिलोचन और केदारनाथ अग्रवाल का तुलनात्मक विश्लेषण करते हुए शमशेर ने जिस हुनर के साथ अपने विचारों को व्यक्त किया है वह अद्भुत है। उदाहरण के तौर पर उनके गद्यांश का एक टुकड़ा देखा जा सकता है– "केदार के साथ जिसका विशिष्ट व्यक्तित्व बराबर मेरे मन में उठ रहा था वह है– वैसी ही मज़बूत ज़मीन पर खड़े होकर लिखने वाला कवि त्रिलोचन। ––– मगर केदार से उसकी ज़मीन शायद कुछ अधिक कड़ी है, फलत: उसे तोड़ने का उसका ढंग भी उससे कुछ कड़ा और काफ़ी अलग। उसकी भी दृष्टि खरी और पैनी है (खरी वैसी ही, पैनी और अधिक) और एकदम जनवादी– मगर उससे बिल्कुल भिन्न।"[5] त्रिलोचन में सृजन की अपार, अकूत, अतुलनीय शक्ति है, परन्तु वह साहित्य के ऐसे हनुमान हैं जो अपने राम में ही रमे रहते हैं। कवि की उपलब्धियाँ सहज चौंकाने वाली नहीं है। सामान्य और व्यापक जीवन की तहों को छूकर बार–बार और एक अजीब निर्विकार रूप से, उन तहों की मिट्टी लाकर हमारी मुट्ठी में रखती हैं। वे सपाट और स्पष्ट शैली में ही विश्वास करते थे तथा उद्धरण के लिए ज्ञान–गर्भ और अनुभूति से लबरेज़ जितनी पंक्तियाँ अकेले त्रिलोचन के यहाँ से ली जा सकती हैं, उतनी खड़ी बोली के किसी दूसरे कवि के यहाँ से कदापि नहीं।

रघुवीर सहाय और सर्वेश्वरदयाल सक्सेना का तुलनात्मक विवेचन करते हुए 'एक बिल्कुल पर्सनल एसे' में शमशेर जो कहते हैं उससे उनके शब्दों की बाज़ीगरी का पता चलता है। इस प्रसंग में निबन्धांश का एक उदाहरण दर्शनीय है– "रघुवीर सहाय 'वातावरण' पर ज़्यादा ध्यान देते हैं और अपना 'कैनवास' दूर

तक फैलाते हैं, इसलिए उनकी शैली में रिद्म कहीं अधिक तलीफ़ परिवर्तनों के साथ कवि के Attitude की अभिव्यक्ति बनता है। सर्वेश्वरदयाल के यहाँ मैं इसे Attitude से ज़्यादा 'मूड' कहूँगा हालाँकि 'मूड' दोनों ही देते है। मुहावरे की लताफ़ते रघुवीर सहाय के यहाँ मुझे ज़्यादा मिलते हैं लखनवी.... उनकी वजह से शायद एक हलकापन भी कहीं आता है, 'बयान'.... कुल मिलाकर उसकी स्वाभाविकता– सहजता सर्वेश्वरदयाल के आगे पड़ती है। और सहज प्रवाह तथा मुहावरे को लतीफ़ और अनजाने तौर पर जगाई हुई व्यंजनाएँ मुझे.... शायद कुछ अधिक ही आकर्षित करती हैं। इन दोनों कवियों का एक अजब और बड़ा सफल रंग है, "यह दुनिया एक चिपचिपायी हुई–सी चीज़ हो गयी है (स.स.) और 'परछाइयाँ' (स.द.)– इन दोनों में चुनना मेरे लिए बेहद मुश्किल बल्कि असम्भव है, हालाँकि दोनों दो कितनी भिन्न चीजें हैं।"[6]

अज्ञेय को शमशेरबहादुर सिंह फेवरिट कवि मानते हैं तो वहीं गजानन माधव 'मुक्तिबोध' को फेवरिट कवि के आतंक के रूप में स्वीकार करते हैं। नागार्जुन और त्रिलोचन से मुझे दृष्टि मिलती है। ये दोनों मेरे लिए बहुत बड़े और गहरे अर्थ में जीवन के कवि हैं। नागार्जुन, त्रिलोचन और केदार के यहाँ दार्शनिक दृष्टिकोण महत्त्वपूर्ण है तो अज्ञेय के यहाँ कला। मुक्तिबोध एक अजब मार्क्सवादी व्यंग्यकार कवि हैं। चूँकि वह पेण्टर और मूर्तिकार हैं अपनी कविताओं में– और उसकी शैली बड़ी शक्तिशाली, कुछ यथार्थवादी मैक्सिकन भित्तचित्रों की–सी है, वह मुझे प्रिय है।[7] इस तरह और भी कवियों (जैसे श्रीकान्त वर्मा, वीरेन्द्र मिश्र आदि) पर भी वे विचार बहुत ही सोच–समझकर, ठोठ–ठठाकर, गुणा–भागकर, जोड़–घटाकर, आगे–पीछे देखकर करते हैं और पुनः जब लेखनी उठाते हैं तो गद्य के रूप में विचार प्रस्फुटित होने लगते हैं। शमशेर ने जैसा गद्य लिखा है वैसा बिरले लोगों में लिखने की क्षमता है। वे गद्यकार के रूप में अपने ढंग के, अपने अन्दाज़ के अकेले है, कोई दूसरा नहीं है। इसलिए मुझे यह कहने में ज़रा सा भी संकोच अनुभव नहीं हो रहा है कि शमशेर प्रातिभ गद्यकार हैं।

शमशेर रहीम को सांस्कृतिक समन्वय का प्रतीक मानते हैं। वे संस्कृति पर अपने अन्तर्मन में गहन विचार–विमर्श करते हैं तब जाकर उसे गद्यभाषा में उतारने का प्रयास करते हैं। उनके गद्य का एक नमूना– "संस्कृति अंधे की लकड़ी नहीं है कि जिसे लिये–लिये लोग सर्वत्र घूमें– बिना जाने क्या उसकी परिभाषा इतनी सहज है? वह तो कल्पतरु है। जिसकी शाखाएँ हम और आप ....आज तक जीवित हैं।"[8] रहीम की 'नगर–शोभा' भी एक दिलचस्प चींज़ है। देव के जाति–विलास का यह अग्रज है। इसमें 60–61 जातियों की नायिकाओं का वर्णन है। जैसे– ब्राह्मणी, खतरानी, बनियाइन, राजपूतानी, जोगिन, भगतिन, धोबिन, चमारिन आदि। यह ग्रन्थ रहीम के सैलानी स्वभाव का परिचायक है। यह संक्षिप्त रेखा–चित्रों का एक जीता–जागता–सा एल्बम है।[9]

लई आरागाँ को नये यूरोपियन साहित्य के व्यक्तित्व के रूप में शमशेर ने प्रतिष्ठा दिलायी है। वे उनकी अद्वितीय प्रतिभा को अपनी अन्तर्दृष्टि से पहचान लेते हैं। उनका मानना था कि, "आरागाँ जिस सूझ–बूझ और अपनाव के साथ दूसरे कवियों की रचना की दाद देता है, वह महज रस्सी या बुजुर्गाना ढंग की चींज़ नहीं

होती, बल्कि उसमें अच्छी कला की जाँच और तोल के साथ ऐतिहासिक परख की नज़र छिपी होती है।"[10] आरागाँ स्वयं अपने साहित्य में अपने संघर्षशील आधुनिक पटल की आत्मा है।[11]

ग़ालिब पर सूक्ष्म दृष्टिपात करते हुए शमशेर ने उनको एक बड़ा हीरो के रूप में देखा तथा वे 'ग़ालिब : मेरी दृष्टि' नामक लेख में उनको आधुनिक साहित्यकार के रूप में स्थापित किया है। नमूना स्वरूप इस लेख का एक टुकड़ा– "उसमें आज के आधुनिक साहित्यकार की–सी पूरी तड़प और वेदना के बीच एक तटस्थ यथार्थवादी दृष्टि है। उनका यथार्थवाद निर्मम है। मुक्तिबोध और निराला, अपने भिन्न संस्कारों के अस्त–व्यस्त परिवेश में उसको कुछ न कुछ प्रतिबिम्बित करते हैं।"[12] निराला पर शमशेर जब लिख रहे होते हैं तो बहुत ही बारीक़ी से उनकी कविताओं का मूल्यांकन करते हैं तथा शैली के बारे में तीन–चार चींजें बताते हैं, जिसकी एक बानगी देखी जा सकती है– "निराला की शैली में वही तीन–चार चींज़ें एक साथ घुली मिली हुई हैं, संगीत, ताल और लय, गति नाटकीयता, संवाद की स्थिति एक ऐसा वार्तालाप जो दो स्तरों पर परम प्रिय या प्रिया के साथ और उसके माध्यम से स्वयं अपनी एक दूसरी सत्ता से।"[13] तो सुभद्राकुमारी चौहान के बारे में शमशेर ने स्पष्ट करते हुए कहा है कि सुभद्रा जी के व्यक्तित्व में उनके द्वारा किये हुए लगातार संघर्ष छिपा हुआ है। समस्याओं से मुक्ति में ही वे अपनी मुक्ति मानती हैं। सुभद्रा जी अपने अन्य समकालीन कवियों से अधिक लोकप्रियता प्राप्त की थीं इसका कारण था कि उनकी सहज आत्मीयता और लोकभावनाओं का गहरा अपनाव।

शमशेर बहादुर सिंह के जीवन में अनेक उतार–चढ़ाव के दिन आये और गये, परन्तु पत्नी की मृत्यु ने उनके जीवन पर गहरा प्रभाव डाला। उनकी मानसिकता, वियोग हो जाने पर कैसे हो गयी थी इसकी एक बानगी 'कुछ कविताएँ' पृष्ठ 61 की एक कविता के माध्यम से देखी जा सकती है– "तुम जाओ तो ख़ुद घर मेरा आ जायेगा/ इस कोनों मकाँ में/ तुम जिसकी हया हो/ लय हो।"

पत्नी की मृत्यु के कुछ वर्ष पश्चात् पिता का भी देहावसान हो गया। शमशेर अब इधर– उधर भटकने पर मज़बूर हो गये। एक दिन इनकी मुलाकात बच्चन जी से हो गयी और वे इनको इलाहाबाद बुलाये। बच्चन की ही प्रेरणा से शमशेर हिन्दी साहित्य में अपने नन्हें–नन्हें क़दमों से डग भरना सीखने लगे और सफलता की सीढ़ी पर चढ़ने भी। उन्होंने स्वयं अपने लेख 'किस तरह आख़िरकार मैं हिन्दी में आया' में स्वीकार किया है– "मैंने देखा कि कविता में मेरा नया अभ्यास निरर्थक नहीं गया, 'सरस्वती' में छपी एक कविता ने निराला जी का ध्यान आकृष्ट किया, कुछ निबन्ध मैंने लिखे। 'रूपाभ' ऑफिस में प्रारम्भिक प्रशिक्षण लेकर मैं बनारस 'हंस' कार्यालय की 'कहानी' में चला गया। निश्चय ही हिन्दी के साहित्यिक प्रांगण में बच्चन मुझे घसीट कर लाये थे।"[14]

शमशेर कैफ़ी आज़मी के बारे में लिखते हैं तो पता चलता है कि जैसे वे किसी के प्रश्नों पर साक्षात्कार दे रहे हों। लेखन–शैली का अजूबा हुनर शमशेर में विद्यमान है तभी वे इस प्रकार का लेखन–कार्य बिना किसी झंझट के स्वाभाविकता से पूर्ण कर लेते हैं। लेखन का एक गद्यांश– "वह एक साथी शायर है! हमें हैरत में डाल देने की जुगत नहीं करता.... न तो गूढ़ चिन्तन द्वारा, न चित्र–विचित्र कल्पनाओं के अनोखेपन से।

उसकी नज़्मों के तेवर बेतकल्लुफ़ हमें मोह लेते हैं। वह जो बात करता है लगती हुई और साफ मोहब्बत की बात हो या जुदाई की, जोशो–खरोश और इन्कलाब की या कोमल संगीत की और बर्षा की फुहारों की ....वह आस–पास के माहौल से दुखी हो या पूर उम्मीद.... वह जिस भी तरंग में हो, मूड में हो–हर हाल में हम अपने आपको गोया उसके साथ पाते हैं। हाँ, वो तेलंगाना हो कि फरगाना, अस्पताल हो कि घर की देहलीज़, मैखाना हो कि बिराना.... सब जगह वह हमारे साथ है और हमें अपनी परिचित शैली में हमारे माहौल की हक़ीक़त से, रास्तों की पेंचों ख़म से (स्वार्थी सियासत के दाँव–पेंच हो, चाहे धर्म का ढोंग और मजहब की आड़) बराबर आगाह करता चलता है और किस मज़े के साथ।"[15]

शमशेर ने नामवर सिंह में मार्क्सवादी आलोचक के रूप को देखते हुए उनके बारे में कहा है– "मुक्तिबोध ने नये मार्क्सवादी आलोचक से जो–जो अपेक्षाएँ की है, डॉ. नामवर सिंह ने उन पर बहुत ध्यान से मनन किया है। दरअसल नामवर की स्थापनाओं के सन्दर्भ–रूप में मुक्तिबोध का अध्ययन और उसके बाद फिर नयी कविता के प्रतिमान का मूल्यांकन करने की ज़रूरत है।"[16] भाषा के विकसित रूपों और शिल्प के कसते या खुलते गठन में। मेरी जाती दिलचस्पी काव्य के इस फार्मल पक्ष पर ही अधिकतर रही है और यह चींज़ अक्सर मुझे बहुत नैस्टैल्जिक बना देती है।[17]

श्रीकान्त वर्मा की कविता के बहाने से 'कल और सृजन' नामक निबन्ध में काल के खण्ड पर विचार करते हुए शमशेर ने जो कहा वह आज भी बहुत प्रासंगिक लगता है। उनके कहने का ढंग निराला और स्वाभाविक लगता है। एक बानगी– "श्रीकान्त वर्मा की नगरों वाली कविताएँ पुराने ऐतिहासिक सन्दर्भों, पिछले युगों को आज की पृष्ठभूमि से जोड़ती हैं, हाल के दो भिन्न खण्ड आमने–सामने आ बैठते हैं और हम अपने सामाजिक पहलुओं को प्राचीन के दर्पण–बिम्ब में देखकर उसे नयी दृष्टि से समझने में कुछ–न–कुछ कामयाब होते हैं। ये नयी दृष्टि हमें इतिहासकार नहीं बल्कि एक रचनाकार देता है।"[18]

शमशेर ने 'कवि कर्म : प्रतिभा और अभिव्यक्त–1' में भविष्य के कवियों के लिए तीन विषयों को एक साथ विकास करने की बात कही है– पहली बात कवि को अपने देश की सारी सामाजिक, राजनीतिक और दार्शनिक गतिविधियों को समझने के साथ विज्ञान में गहरी और जीवन्त रुचि होनी चाहिए। दूसरी बात– संस्कृत, उर्दू, फ़ारसी, अरबी, बांगला, अंग्रेज़ी और फ्रेंच भाषाएँ तथा साहित्य से गहरा परिचय होना चाहिए तथा तीसरी बात– तुलसी, सूर, कबीर, जायसी, मतिराम, देव, रत्नाकर और विद्यापति के साथ ही नज़ीर और मीर, ग़ालिब, दाग़, इकबाल, ज़ौक और फ़ैज़ के कलाम और क्लासिकी गद्य को अपने साहित्यगत और भाषागत संस्कारों में बसा लेना चाहिए। इन सभी तीन विषयों को जो कवि अपने अन्तस् में समाहित कर लेगा वही कवि हो जायेगा। तो 'कविकर्म : प्रतिभा और अभिव्यक्ति–2' में कवियों के क्या गुण होने चाहिए के बारे में भी उनका कथन प्रासंगिक लगता है। उदाहरणार्थ– "अभिव्यक्ति की अनिवार्यता, समकालीन नाना परिस्थितियों के प्रति नैसर्गिक संवेदना, उनमें कहीं न कहीं बौद्धिकता, नैतिक या आध्यात्मिक रूप से अपने को गहराई से जुड़ा हुआ महसूस करना और अभिव्यक्ति में विशेष ज़ोर या बल। अभिव्यक्ति का रंग चाहे लोकगीत का हो या प्रार्थना का, उसमें कवि के व्यक्तित्व का गहरा डूबा होना अनिवार्य शर्त है।"[19] और अन्त

में 'आशुकविता, लेख में ग़ालिब के बारे में जो शमशेर ने लिखा है वह इनकी गद्यविधा की बैठ के बारे में बताने के लिए काफ़ी है– "ग़ालिब स्वयं अपने शेरों की रचना में बहुत गहरी फ़िक्र से काम लेते थे। उनके हर शेर के पीछे– जैसे कि हर सच्चे कवि की रचना के पीछे होना चाहिए आवश्यक है– अनुभूति की गहरी पीड़ा और शिल्प का अत्यन्त मार्मिक रचाव मौज़ूदा होता था।"[20]

निष्कर्ष:

आद्यन्तत: गद्यलेखों और निबन्धों पर समग्र दृष्टिपात करने के परिणाम स्वरूप शमशेर की जो छवि उभरती है, वह है एक प्रत्युत्पन्न मतित्व प्रातिभ गद्यकार की। मौलिकत: तो शमशेर की साहित्यिक प्रतिमा एक समर्थ कवि की बनती है, परन्तु उनकी गद्यकार प्रतिमा भी उनकी कवि–प्रतिमा से उन्नीस नहीं है।

सन्दर्भ :

1. कुछ और गद्य रचनाएँ (शमशेरबहादुर सिंह) संपादक : रंजना अरगड़े, राधाकृष्ण प्रकाशन, दरियागंज, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1992, पृष्ठ 11
2. वही, पृष्ठ 13
3. वही, पृष्ठ 18
4. वही, पृष्ठ 19
5. वही, पृष्ठ 20–21
6. वही, पृष्ठ 27–28
7. वही, पृष्ठ 35
8. वही, पृष्ठ 42
9. वही, पृष्ठ 45
10. वही, पृष्ठ 53
11. वही, पृष्ठ 59
12. वही, पृष्ठ 67
13. वही, पृष्ठ 81
14. वही, पृष्ठ 101
15 वही, पृष्ठ 134
16 वही, पृष्ठ 152
17. वही, पृष्ठ 253
18. वही, पृष्ठ 230
19. वही, पृष्ठ 233
20. वही, पृष्ठ 239

डॉ. अंगदकुमार सिंह, असिस्टेण्ट प्रोफ़सर: हिन्दी, जवाहरलाल नेहरू पी.जी. कॉलेज, बाँसगाँव
गोरखपुर (उ.प्र.), भारत – 273403, मो.नं.: 7460856206
ई-मेल: anagadkumarsingh01@gmail.com